What is Nyasa? How to do it? What is the Importance of it for a Sadhak?

षट्पञ्चाशत् अध्याय

न्यासविद्या और त्रिपुरोपासना

न्यास : 'सोऽहमस्मि' की साधना— 'न्यास' अपने तन-मन में मन्त्र, ऋषि, मातृका एवं देवता की स्थापना का विधान है। 'न्यास' अपने शरीर में देवत्व का आधान है। यह उपासक का उपास्य के साथ तादात्म्यभाव, तद्रूपता, तत्स्वरूपता प्राप्त करने की एक पद्धति है। ध्याता की सर्वोच्च उपलब्धि प्रगाढ़ ध्यान नहीं है; अपितु ध्येयाकार बन जाना है। द्रष्टा की चरितार्थता दृश्याकार हो जाना है। ज्ञाता की साधना का सर्वोच्च फल ज्ञेयाकारता ग्रहण कर लेना है। देवता के उपासक की सर्वोच्च उपलब्धि देवता का अविरत ध्यान नहीं; अपितु देवता बन जाना है। जो देवता नहीं बन सका, वह देवता की उपासना का अधिकारी भी नहीं बन सकता। 'न्यास' इसी अधिकारवाद का विधायक है। यह इसी तद्रूपता की शैली है। यह देवोपासक को देवता बनाने की तान्त्रिक विधि है। यह 'सोऽहमस्मि' की अनुभूति की साधना है। इसीलिये 'गन्धर्वतन्त्र' में कहा गया है कि—

जो देवता हो, वही देवता की पूजा करे। जो देवता न बन पाया हो, वह देवता की पूजा न करे— 'देव एव यजेद्देवं नादेवो देवमर्चयेत्।'

जो विष्णु न बन सका हो, यदि वह विष्णु की पूजा करता है तो उसकी समस्त पूजा व्यर्थ होती है— 'अविष्णुः पूजयेद्विष्णुं न पूजाफलभाग्भवेत्।' (वशिष्ठरामायण)

जो विष्णु बन कर विष्णु की पूजा करता है, वह साक्षात् महाविष्णु कहलाता है— 'विष्णुर्भूत्वाऽर्चयेद्विष्णुं महाविष्णुरिति स्मृतः।' (वशिष्ठरामायण)

भारत में भी यही कहा गया है—

नाविष्णुः कीर्तयेद्विष्णुं नाविष्णुर्विष्णुमर्चयेत्।
नाविष्णुः संस्मरेद्विष्णुं नाविष्णुर्विष्णुमाप्नुयात्।।

भविष्यपुराण में भी कहा गया है—

- नारुद्रः संस्मरेद्रुद्रं नारुद्रो रुद्रमर्चयेत्।
- नारुद्रः कीर्तयेद्रुद्रं नारुद्रो रुद्रमाप्नुयात्।
- नादेवी कीर्तयेद्देवीं नादेवी तां समर्चयेत्।

न्यास : देवतादात्म्य की साधना— 'न्यास' के द्वारा देवतात्मक बनकर ही देवता की पूजा करनी चाहिये—

न्यासात्तदात्मको भूत्वा देवो भूत्वा तु तं यजेत्।

न्यास की पद्धति साधक को देवतात्व प्रदान करती है; जैसा कि 'अग्निपुराण' एवं 'शाक्तानन्दतरङ्गिणी' में कहा भी गया है—

येनैव न्यासमात्रेण देववज्जायते नरः।

DR.RUPAK NATH JI DR.RUPAK NATH JI

प्राणायाम, ध्यान एवं न्यासों द्वारा प्रथमत: साधक को देवशरीर प्राप्त करना चाहिये और तभी देवपूजा करनी चाहिये; जैसा कि कहा भी गया है—

प्राणायामैस्तथा ध्यानैर्न्यासैर्देवशरीरभृत्। (आग्नेयपुराण)
न्यासत्तदात्मको भूत्वा देवो भूत्वा तु यं यजेत्।। (भविष्यपुराण)

हम सर्वप्रथम ऋषिन्यास को लेते हैं, उसके अंगों का विवरण निम्नवत् है—

ऋषि— 'ऋषय: मन्त्रद्रष्टार: स्मारका न तु कारका:।' अर्थात् जो किसी मन्त्र के द्रष्टा हैं, स्मारक हैं, वे ही 'ऋषि' हैं। वे मन्त्रों के कारक नहीं, मात्र स्मारक हैं। ऋषियों ने ही तपोबल से मन्त्र की साधन-प्रणाली का आविष्कार किया।

छन्द— जिस प्रणाली द्वारा, जिस छन्द से, जिस भाव का स्पन्दन उत्पन्न करके अपने उद्देश्य की सिद्धि की, वही उस साधन-प्रणाली या मन्त्र का 'छन्द' है।

देवता— प्रकृति के विभिन्न तत्त्वों में, विभिन्न स्तरों में चैतन्य परमात्मा किस प्रकार प्रकाशित एवं लीलारत है, यह 'देवता' तत्त्व के अन्तर्गत है। भगवच्चैतन्य के विभिन्न प्रतिबिम्ब (विभूति), विभिन्न लीलाभाव का ही नाम है— 'देवता'।

विनियोग— कौन-सी भावना किस भाव या उद्देश्य से अनुष्ठित हुई और उससे क्या प्रयोजन सिद्ध हुआ, इसी का सूचक मन्त्रांश 'विनियोग' होता है।

प्रथमत: साधक को निश्चित करना है कि उसका लक्ष्य क्या है? वह चाहता क्या है? फिर निश्चय करना होगा कि वह अभीष्ट लक्ष्य किसके जीवन में चरितार्थ हुआ? जिन्होंने अपने लक्ष्य में सर्वप्रथम सिद्धि प्राप्त की, वे ही इस साधनापद्धति के 'ऋषि' कहलाते हैं। जिस स्नायुकेन्द्र में वह शक्ति है, उस स्नायुकेन्द्र में उस शक्ति के प्रकाश एवं कार्यपद्धति को (उस स्नायुकेन्द्र में प्राणवायु एवं मनन शक्ति को एकाग्र करके तथा उस शक्ति को जागृत करके) प्राप्त करना ही उस साधनप्रणाली का 'देवतातत्त्व' है। फिर उस जाग्रत शक्ति को अपने लक्ष्यसिद्धि में नियुक्त करके अपने लक्ष्य को सिद्ध करना ही 'विनियोगतत्त्व' है। मन्त्र को उत्कीलित करके उसे जागृत करना ही 'उत्कीलन' है।

शरीर के विभिन्न स्थानों पर मातृका या मालिनी के वर्णों की स्थापना करना ही 'न्यास' है। वर्णस्थापना से आवेश उत्पन्न होता है—

इत्येषा मालिनी देवी शक्तिमत्क्षोभिता यत:।
कृत्यावेशात्तत: शाक्ती तनु: सा परमार्थत:।।

जो वर्णमाला शिवशक्ति-सघट्ट से आविर्भूत हुई है और जिसमें क्षुभित शक्ति विद्यमान है, वह प्रत्येक प्रकार की सिद्धि प्रदान कर सकती है।

देवता के अंग से निकली हुई चिद्रश्मियों का अपनी देह में सन्निवेश करना ही न्यासप्रक्रिया का उद्देश्य है। न्यास के द्वारा ही देवभाव प्राप्त होने से उपासना में अधिकार प्राप्त होता है। यह न्यासतत्त्व अत्यन्त जटिल एवं दुर्ज्ञेय है। तान्त्रिक साधना में न्यास

DR.RUPNATHJI(DR.RUPAKNATH)

DR.RUPNATHJI(DR.RUPAK NATH)

का कितना उच्च स्थान है, इस बात को प्रत्येक तान्त्रिक साधक जानता है।[१]

योगिनीहृदय (पूजासङ्केत) में कहा गया है—

न्यासं निर्वर्तयेद्देहे षोढा न्यासपुरःसरम्।
गणेशैः प्रथमो न्यासो द्वितीयस्तु ग्रहैर्मतः।।

नक्षत्रैश्च तृतीयः स्याद्योगिनीभिश्चतुर्थकः।
राशिभिः पञ्चमो न्यासः षष्ठः पीठैर्निगद्यते।।

षोढा न्यासस्त्वयं प्रोक्तं सर्वत्रैवापराजितः।
एवं यो न्यस्तगात्रस्तु स पूज्यः सर्वयोगिभिः।।

नास्त्यस्य पूज्यो लोकेषु पितृमातृमुखो जनः।
स एव पूज्यः सर्वेषां स स्वयं परमेश्वरः।।

षोढा न्यासविहीनं यं प्रममेदेष पार्वति।
सोऽचिरान्मृत्युमाप्नोति नरकं च प्रपच्यते।।

'षोढा न्यास' का तन्त्रशास्त्र में अत्यन्त महत्त्व है।

न्यास : अद्वैतभाव की भावना— 'न्यास' पिण्ड के ब्रह्माण्डीकरण की साधना है। यह मन्त्र एवं देवता के साथ तादात्म्य की साधना है। इसी कारण तान्त्रिकोपासना में न्यास एक आवश्यक अवयव है। इसके प्रयोग से साधना में साफल्य शीघ्र प्राप्त होता है। न्यास के प्रयोग से मन्त्रसिद्धि एवं देवसाक्षात्कार भी शीघ्र होता है। देवत्व की प्राप्ति भी न्यास-साधना द्वारा शीघ्र होती है।

न्यास का अर्थ है— स्थापन, उचित स्थान पर रखना, धरोहर-निक्षेप, अर्पण, पूजा की तान्त्रिक पद्धति के अनुसार देवता के भिन्न-भिन्न अंगों का ध्यान करते हुये मन्त्र पढ़कर उन पर विशेष वर्णों का स्थापन, किसी रोग या बाधा की शान्ति हेतु रोगी या बाधाग्रस्त मनुष्य के एक-एक अंग पर हाथ ले जाकर मन्त्र पढ़ने का विधान।

न्यास की आवश्यकता— 'देवो भूत्वा देवं यजेत्' विधान के अनुसार साधक को भी देवता की भाँति अपने शरीर को देवमय, दिव्य एवं पुनीत बनाने की आवश्यकता है। शरीर अपवित्रता का साम्राज्य है; अतः 'पवित्रतम' (नामी और उसके नाम : देवता और उसके मन्त्र) को शरीर में बैठाने के लिये शरीर को भी पवित्र करना ही पड़ेगा। पवित्रीकरण की विधियों में से एक विधि 'न्यास' भी है। यह तन-मन की दिव्यीकरण-प्रक्रिया भी है।

न्यास : अद्वैतभाव की साधना— साधना का चरम लक्ष्य है— अद्वैतावस्थान। 'न्यास' अद्वैताप्ति की साधना की पृष्ठभूमि है। यह वर्ण, बीज, मन्त्र, ऋषि, छन्द, देवता, शक्ति, कीलक, दिशा, स्तोत्र, पिण्डस्थ चक्र, पीठ, गणेश, ग्रह, नक्षत्र, योगिनी

१. तान्त्रिक वाङ्मय में शाक्त दृष्टि।

DR.RUPNATHJI(DR.RUPAK NATH)

राशि आदि के साथ अपनी अभेद-स्थापना का विधान है। यह देवता बनकर देवता की पूजा करने की पद्धति है।

न्यास : 'देवोऽहं' एवं 'विश्वतोऽहं' की अनुभूत्यात्मक साधना— न्यास के द्वारा साधक अपने शरीर में दिव्य शक्तियों की स्थापना करता है। इसके द्वारा वह अपने शरीराङ्गों में ऋषि, छन्द, देवता, बीज, शक्ति, कीलक, मन्त्राक्षर, मातृका (वर्णमाला), आसन (देव्यात्मासन, चक्रासन, सर्वमन्त्रासन, साध्य-सिद्धासन), वाग्देवता, चक्र (त्रैलोक्य-मोहन, सर्वाशापरिपूरक आदि) को; मूलाधार आदि में त्रिपुरा, त्रिपुरेश्वरी, त्रिपुरसुन्दरी, त्रिपुरवासिनी, त्रिपुरासिद्धा, त्रिपुराम्बा, महात्रिपुरसुन्दरी देवी तथा मन्त्रों को; बिन्दु, अर्द्ध-चन्द्र, रोधिनी, नाद, नादान्त, शक्ति, व्यापिका, समना, उन्मना एवं ब्रह्मरन्ध्र में मन्त्रों को तथा शरीरस्थ पीठों एवं अग्निचक्र, सूर्यचक्र, सोमचक्र तथा परब्रह्मचक्र में आत्म-तत्त्व, विद्यातत्त्व, शिवतत्त्व तथा श्रीपादुका एवं कामेश्वरी, महावज्रेश्वरी, भगमालिनी, एवं महा-त्रिपुरसुन्दरी को स्थापित करके अपने को सर्वदेवतामय, सर्वचक्रमय, सर्वमन्त्रमय, सर्व-शक्तिमय, सर्वविद्यामय, सर्वपीठमय, सर्वनादमय एवं सर्वविश्वमय बनाते हुये 'यत्पिण्डे तद् ब्रह्माण्डे' की अनुभूति करने का प्रयास करता है। चूँकि भगवती कुण्डलिनी वर्ण-मयी, मन्त्रमयी, नादमयी एवं ज्योतिर्मयी हैं; अतः साधक वर्णों के साथ अपनी एकता स्थापित करके भगवती कुण्डलिनी के वर्ण, मन्त्र, नाद एवं ज्योतिस्वरूप के साथ ही स्वयं भी उनके साथ तादात्म्य-स्थापन की साधना करता है। साधक 'गणेशन्यास' द्वारा शरीर के अन्दर एवं बाहर के सभी शरीरावयवों में गणेश की स्थापना करके शरीर को गणेशमय बना लेता है तथा इसी प्रकार अपने शरीराङ्गों में चन्द्रमा, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु एवं केतु (ग्रहों); भरणी, कृत्तिका आदि नक्षत्रों; डाकिनी, राकिणी, लाकिनी आदि योगिनियों तथा पीठों (कामरूप, नेपाल, पूर्णशैल, केदार, बद्री, ॐकार आदि पीठों) को अपने शरीराङ्गों में स्थित मानकर (या उनकी स्थापना करके) अपने को सर्वग्रहमय, सर्वराशिमय, सर्वनक्षत्रमय एवं सर्वपीठमय बनाता हुआ पिण्ड से ऊपर उठकर ब्रह्माण्ड या समग्र विश्व बना लेता है या पिण्ड से ब्रह्माण्ड बन जाता है।

यही न्यासविद्या या न्याससाधना का लक्ष्य भी है।

कतिपय न्यासों के उदाहरण

मातृका न्यास

'ॐ अस्य मातृकामन्त्रस्य ब्रह्मऋषिर्गायत्री छन्दो मातृका सरस्वती देवता हलो बीजानि स्वराः शक्तयः क्लीं कीलकं मातृकान्यासे विनियोगः।'

इस विनियोग के अनन्तर जल छोड़ दे तथा ऋष्यादि का न्यास करे—

१. शिर में 'ॐ ब्रह्मणे ऋषये नमः।'

२. मुख में 'ॐ गायत्रीच्छन्दसे नमः।'

DR.RUPNATHJI(DR.RUPAK NATH)

३. हृदय में '3ॐ मातृकासरस्वत्यै देवतायै नमः।'
४. गुह्यस्थान में '3ॐ हल्भ्यो बीजेभ्यो नमः।'
५. पैरों में '3ॐ स्वरेभ्यः शक्तिभ्यो नमः।'
६. सर्वांग में '3ॐ क्लीं कीलकाय नमः।'

इसके अनन्तर करन्यास करे—

3ॐ अं कं खं गं घं ङं आं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः।
3ॐ इं चं छं जं झं ञं ईं तर्जनीभ्यां नमः।
3ॐ उं टं ठं डं ढं णं ऊं मध्यमाभ्यां वषट्।
3ॐ एं तं थं दं धं नं ऐं अनामिकाभ्यां हुम्।
3ॐ ओं पं फं बं भं मं औं कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्।
3ॐ अं य रं लं वं शं षं सं हं लं क्षं ञः अः करतलकरपृष्ठाभ्यामस्त्राय फट्।

इसके अनन्तर अङ्गन्यास करे—

3ॐ अं कं खं गं घं ङं आं हृदयाय नमः।
3ॐ इं चं छं जं झं ञं ईं शिरसे स्वाहा।
3ॐ उं टं ठं डं ढं णं ऊं शिखायै वषट्।
3ॐ एं तं थं दं धं नं ऐं कवचाय हुम्।
3ॐ ओं पं फं बं भं मं औं नेत्रत्रयाय वौषट्।
3ॐ अं यं रं लं वं शं षं सं हं लं क्षं ञः अः अस्त्राय फट्।

इसके अनन्तर अन्तर्मातृकान्यास करे—

हमारे शरीर में 'मूलाधार' आदि छः चक्र हैं। उनमें जितने कमलदल हैं, उतने ही अक्षरों का न्यास किया जाता है। एक प्रकार से यह षट् चक्रन्यास है। सम्प्रदायानुसार इसकी भिन्न-भिन्न पद्धतियाँ हैं।

वैष्णवपद्धति के अनुसार अन्तर्मातृका न्यास

मूलाधार चक्र (स्वर्णाभ एवं चतुर्दलात्मक चक्र)— इसके चारो दलों पर निम्न अक्षरों का न्यास करना चाहिये—

१. 3ॐ वं नमः, २. 3ॐ शं नमः, ३. 3ॐ षं नमः, ४. 3ॐ सं नमः।

स्वाधिष्ठान चक्र (विद्युदाभ षड्दलात्मक चक्र)— इसके छः दलों पर निम्न अक्षरों का न्यास करना चाहिये—

१. 3ॐ बं नमः, २. 3ॐ भं नमः, ३. 3ॐ मं नमः, ४. 3ॐ यं नमः, ५. 3ॐ रं नमः, ६. 3ॐ लं नमः।

मणिपूरक चक्र (नाभिमूलस्थ नीलमेघाभ दशदलात्मक चक्र)— इसके दसों दलों पर निम्न अक्षरों का न्यास करना चाहिये—

DR.RUPNATHJI(DR.RUPAK NATH)

१. ॐ डं नमः, २. ॐ ढं नमः, ३. ॐ णं नमः, ४. ॐ तं नमः, ५. ॐ थं नमः, ६. ॐ दं नमः, ७. ॐ धं नमः, ८. ॐ नं नमः, ९. ॐ पं नमः, १०. ॐ फं नमः।

अनाहत चक्र (हृदयस्थ, प्रवालाथ द्वादशदलात्मक चक्र)— इसके बारह दलों पर निम्न अक्षरों का न्यास करना चाहिये—

१. ॐ कं नमः, २. ॐ खं नमः, ३. ॐ गं नमः, ४. ॐ घं नमः, ५. ॐ ङं नमः, ६. ॐ चं नमः, ७. ॐ छं नमः, ८. ॐ जं नमः, ९. ॐ झं नमः, १०. ॐ ञं नमः, ११. ॐ टं नमः, १२. ॐ ठं नमः।

विशुद्ध चक्र (कण्ठस्थ, धूम्रवर्णाभ, षोडशदलात्मक चक्र)— इसके सोलह दलों पर निम्न अक्षरों का न्यास करना चाहिये—

१. ॐ अं नमः, २. ॐ आं नमः, ३. ॐ इं नमः, ४. ॐ ईं नमः, ५. ॐ उं नमः, ६. ॐ ऊं नमः, ७. ॐ ऋं नमः, ८. ॐ ॠं नमः, ९. ॐ ऌं नमः, १०. ॐ ॡं नमः, ११. ॐ एं नमः, १२. ॐ ऐं नमः, १३. ॐ ओं नमः, १४. ॐ औं नमः, १५. ॐ अं नमः, १६. ॐ अः नमः।

आज्ञा चक्र (भ्रूमध्यस्थ, चन्द्रवर्णाभ, द्विदलात्मक चक्र)— इसके दोनों दलों पर निम्न वर्णों का ध्यान करना चाहिये—

१. ॐ हं नमः, २. ॐ क्षं नमः।

सहस्रार (सहस्रदल पद्म, स्वर्णाभ, त्रिकोणमय चक्र)— इस चक्र में त्रिकोण का ध्यान करना चाहिये। इसके कोण पर ह, ल एवं क्ष अक्षर लिखे हुये हैं। इस त्रिकोण की तीनों रेखायें क्रमशः अ, क, ठ, थ से प्रारम्भ होती हैं। इसी त्रिकोण के मध्य में सृष्टि-स्थिति-लयसमन्वित बिन्दुरूप परमात्मा विराजमान है। इस प्रकार के ध्यान को अन्तर्मातृका न्यास कहते हैं।

बहिर्मातृका न्यास

इस न्यास से पूर्व मातृका सरस्वती का ध्यान किया जाता है, जो निम्नांकित है—

पञ्चाशल्लिपिभिर्विभक्तमुखदोः यन्मध्यवक्षःस्थलाम्
भास्वन्मौलिनिबद्धचन्द्रशकलामापीनतुङ्गस्तनीम् ।
मुद्रामक्षगुणं सुधाढ्यकलशं विद्याञ्च हस्ताम्बुजै-
र्बिभ्राणां विशदप्रभां त्रिनयनां वाग्देवतामाश्रये।।

अर्थात् पचास वर्णों के द्वारा जिनके मुख, बाहु, चरण, कटि और वक्षःस्थल पृथक्-पृथक् दृष्टिगत हो रहे हैं, सूर्य के समान द्योतित जिसके किरीट पर चन्द्रखण्ड शोभायमान है, जिसका वक्षःस्थल बहुत ऊँचा है, जो अपने करकमलों में मुद्रा, रुद्राक्ष-माला, सुधापूर्ण कलश एवं पुस्तक धारण किये हुये हैं, जिनके अंग से दिव्य ज्योति

DR.RUPNATHJI(DR.RUPAK NATH)

विकीर्ण हो रही है; उन त्रिनेत्री वाग्देवता मातृका सरस्वती की मैं शरण ग्रहण करता हूँ। इस प्रकार सरस्वती देवी का ध्यान करने के पश्चात् न्यास करना चाहिये।

इस न्यास में उँगलियों एवं अँगूठों का प्रयोग किया जाता है। न्यास में जहाँ जितनी उँगलियों को मिलाना चाहिये, उसकी संख्या है— १. अंगुष्ठ, २. तर्जनी, ३. मध्यमा, ४. अनामिका, ५. कनिष्ठा।

ललाट में— ॐ अं नमः ३, ४; २. मुख पर— ॐ आं नमः २, ३, ४; ३. आँखों में— ॐ इं नमः, ॐ ईं नमः— १, ४। इसी प्रकार 'ॐ' एवं 'नमः' लगाकर अगले अंगों भी न्यास करना चाहिये।

४. कानों में— उं, ऊं १; ५. नासिका में— ऋं, ॠं १, ५; ६. कपोलों पर— ऌं, ॡं २, ३; ७. ओष्ठ में— एं ३; ८. अधर में— ऐं ३; ९. ऊपर के दाँतों में— ओं ४; १०. नीचे के दाँतों में— औं ४; ११. ब्रह्मरन्ध्र में— अं ३; १२. मुख में— अः ४; १३. दक्षिण हस्त के मूल में— अं ३, ४, ५; १४. केहुनी में— खं ३, ४, ५ १५ मणिबन्ध में— गं; १६. उँगलियों की जड़ में— चं; १७. उँगलियों के अग्रभाग में— डं; १८. इसी प्रकार वाम पाणि के मूल, केहुनी, मणिबन्ध, अँगुली के मूल एवं अङ्गुल्यग्र में— चं, छं, जं, झं, ञं; १९. दक्षिण पैर के मूल में, दोनों सन्धियों में, उँगलियों के मूल में, उनके अग्रभाग में— टं, ठं, डं, ढं, णं; २०. वाम पाद के उन्हीं पाँचों स्थानों में— तं, थं, दं, धं, नं; २१. दक्षिण पार्श्व में— पं; वाम में— फं; पृष्ठ में— बं (यहाँ उँगलियों की संख्या केहुनी वाली ही मान्य है); २२. नाभि में— १, ३, ४, ५; २३. पेट में— १ से ५; २४. हृदय में— यं; २५. दक्षिण स्कन्ध पर— रं; २६. गले के ऊपर— लं; २७. वाम स्कन्ध पर— वं; २८. हृदय से दाहिने हाथ तक— शं; २८. हृदय से बायें हाथ तक— षं; २९. हृदय से दाहिने पैर तक— सं; ३०. हृदय से बायें पैर तक— हं; ३१. हृदय से पेट तक— लं; ३२. हृदय से मुख तक— क्षं; ३३. हृदय से अन्त तक— हथेली से न्यास करना चाहिये।

DR.RUPNATHJI(DR.RUPAK NATH)

संहारमातृकान्यास

बाह्य मातृकान्यास की समाप्ति के बाद संहारमातृकान्यास आरम्भ होता है। सर्व-प्रथम ध्यान करणीय होता है, जो निम्नांकित है—

अक्षस्रजं हरिणपोतमुदग्रटङ्कं विद्यां करैरविरतं दधतीं त्रिनेत्राम्।
अर्द्धेन्दुमौलिमरुणामरविन्दरामां वर्णेश्वरीं प्रणमतस्तनभारनम्राम्।।

अर्थात् जो चार कई कमलों में रुद्राक्षमाला, हरिणशावक, पत्थर फोड़ने की टांकी एवं पुस्तक धारण किये रहती हैं, जिनके तीन नेत्र हैं, जिनके मुकुट पर अर्द्धचन्द्र स्थित है, जिनके शरीर का रंग लाल है, जो कमल पर आसीन हैं, जो स्तनों के भार से झुकी हुई हैं; उन वर्णेश्वरी को नमस्कार कीजिये।

बाह्य मातृकान्यास में अक्षरोच्चारण चार प्रकार से किया जा सकता है— १. केवल अक्षर, २. सबिन्दु अक्षर, ३. सविसर्ग अक्षर एवं ४. बिन्दु-विसर्गयुक्त अक्षर।

इन अक्षरों के पूर्व बीजाक्षर भी जोड़े जाते हैं। कामना-वैभिन्य के अनुसार बीजाक्षर भी बदल जाते हैं; यथा— वाक्सिद्ध्यर्थ 'ऐं', श्रीवृद्ध्यर्थ 'श्रीं', सर्वसिद्ध्यर्थ 'नमः', वशीकरणार्थ 'क्लीं' एवं मन्त्रप्रसादानार्थ 'अः' जोड़ा जाता है।

मन्त्रशास्त्र की मान्यता है कि मातृकान्यास के विना मन्त्रसिद्धि अत्यन्त दुष्कर है।

न्यास-पद्धति— बाह्य मातृकान्यास का अन्त होता है— 'ॐ लं नमः, ॐ क्षं नमः।' संहारमातृका न्यास की पद्धति में (बाह्य मातृकान्यास की जहाँ समाप्ति होती है— 'ॐ क्षं नमः' से) विपरीत क्रम से न्यास किया जाता है अर्थात् बाह्य मातृका न्यास जहाँ समाप्त होता है, वहीं से संहारमातृका न्यास प्रारम्भ होता है।

न्यासों में 'अन्तर्न्यास' केवल मन से किया जाता है। 'बहिर्न्यास' भी केवल मन से किया जाता है। बहिर्न्यास में तत्तत् स्थानों का स्पर्श किया जाता है। स्पर्श भी दो प्रकार के होते हैं— किसी पुष्प से या अँगुलियों से। उँगलियों द्वारा स्पर्श भी द्विविध है— अंगुष्ठ एवं अनामिका को मिलाकर एवं भिन्न-भिन्न अंगों के स्पर्शहेतु भिन्न-भिन्न उँगलियों के प्रयोग द्वारा। विभिन्न उँगलियों द्वारा किया गया न्यास इस पद्धति से करणीय होता है—

मध्यमा + अनामिका + तर्जनी से 'हृदय', मध्यमा + तर्जनी से 'सिर', अँगूठे से 'शिखा', दस उँगलियों से 'कवच', तर्जनी + मध्यमा + अनामिका से 'नेत्र' एवं तर्जनी + मध्यमा से करतलपृष्ठ का न्यास करणीय होता है। यदि देवता त्रिनेत्री हो तो तर्जनी + मध्यमा + अनामिका से एवं यदि देवता द्विनेत्री हो तो मध्यमा + तर्जनी से नेत्र में न्यास करना चाहिये।

'पञ्चाङ्गन्यास' में नेत्र को छोड़ दिया जाता है। वैष्णवों के लिये इसका क्रम भिन्न है। अंगुष्ठ छोड़कर सीधी उँगलियों से हृदय + मस्तक में न्यास करना होता है। अंगुष्ठ को अन्दर करके मुष्टि बाँधकर शिखा का स्पर्श किया जाता है। समस्त उँगलियों से कवच, तर्जनी + मध्यमा से नेत्र, नाराचमुद्रा से दोनों हाथों को ऊपर उठाकर अंगुष्ठ + तर्जनी द्वारा मस्तक के चतुर्दिक करतल ध्वनि करनी चाहिये। जहाँ अङ्गन्यास का मन्त्र प्राप्त नहीं होता, वहाँ देवता के नाम के प्रथमाक्षर से अङ्गन्यास करना चाहिये।

हमारे शरीर के प्रत्येक अवयव में, प्रत्येक इन्द्रिय में एवं अन्तःकरण आदि में देवता निवास करते हैं। हमें यह ध्यान रखते हुये अपने अन्तस्थल एवं बाह्य शरीर दोनों को दिव्य बनाना चाहिये। दिव्यतम परमात्मा का आसन भी दिव्य होना चाहिये। पवित्रतम इष्टदेव के लिये साधक का शरीररूपी घर भी पवित्र होना चाहिये। शक्तिमान शिव या शक्ति के आसीन होने हेतु साधक का शरीररूपी सिंहासन भी जागृत शक्ति, मान्त्रिक शक्ति, आत्मतेज, संविदुल्लास, प्रेम एवं भक्ति की आह्लादिनी शक्ति से देदीप्यमान होना

DR.RUPNATHJI DR.RUPAK NATH

चाहिये; अन्यथा देवता अशुद्ध, अपवित्र, अचेतन, शक्तिशून्य तथा निस्तेज सिंहासन पर बैठेगा ही नहीं। शक्ति के इसी आयत्तीकरण, मानस के दिव्यीकरण, शरीराङ्गों के चैतन्यीकरण एवं सर्वाङ्गपूर्ण समस्त शरीर के पवित्रीकरण तथा देव-तादात्म्यीकरण के लिये ही तो यह समस्त न्यास-विद्या का विधान किया गया है।

अभिनवगुप्तपाद की दृष्टि— अभिनवगुप्तपादाचार्य ने तन्त्रालोक (आह्निक-१५) में तत्त्वोदया न्यासविधि का उल्लेख करते हुये कहा है कि 'न्यासपञ्चक' सर्वातिशायी महत्त्व के हैं, जो अङ्गवक्त्रन्यास, मातृकान्यास, त्रितत्त्वन्यास, अघोराष्टकन्यास एवं शिवसद्भाव न्यास के नाम से जाना जाता है।

अङ्गवक्त्रन्यास— नवात्मदेव (अघोर, घोर, घोर, घोरतर, सर्व, शर्व, रुद्र, तत्पुरुष, महादेव— इन आठ रूपों में स्थित शिव) के भेद से ही यह न्यास करना चाहिये। इसे 'तत्त्वोदय न्यास' कहते हैं।

१. शिष्य के अंगों में सर्वप्रथम पञ्चवक्त्रन्यास (ईशान, तत्पुरुष, सद्योजात, अघोर एवं वामदेव) करने से शिष्य में सदाशिव की विलक्षण शक्ति का उदय होता है। इस पद्धति में अंगों में तत्त्वों का ध्यान करना चाहिये। यथा— 'अघोर'– अग्नितत्त्व (रूप) का नेत्र में, 'वामदेव'– जलतत्त्व (रस) का रसना में, 'ईशान'– आकाशतत्त्व (शब्द) का कानों में, 'सद्योजात'– पृथ्वीतत्त्व (गन्ध) का सर्वांग में तथा 'तत्पुरुष'– वायु तत्त्व (स्पर्श) का शरीरांग त्वक् में न्यास करना चाहिये। इच्छाशक्ति में 'उन्मना' की प्रतिष्ठा होती है।

२. शक्ति-दृष्टि से न्यास का द्वितीय प्रकार— समना, नाद और बिन्दु शक्तियों का शाश्वत परामर्श होता है। शरीर के उत्तमांग में इनकी प्रतिष्ठा होती है।

३. शक्ति-दृष्टि के अन्तर्गत अनुग्रह, तिरोधान, संहार, स्थिति और सृष्टि की प्रथा प्रथित होती है।

४. ईश्वरतत्त्व की दृष्टि से महत्, रूपातीत, रूप, पद एवं पिण्ड का ध्यान करके पूर्वोक्त अंगों में न्यास करना चाहिये।

५. विद्यातत्त्व की दृष्टि से तुर्यातीत, तुर्य, सुषुप्ति, स्वप्न एवं जागृति का ध्यान करके न्यास करना चाहिये।

६. विद्यातत्त्व की दृष्टि से ही शाम्भवी शक्ति की बोधिनी, शोधिनी और आणवी शक्तियों का न्यास होता है। इसी से दीक्षा दीप्त होती है।

७. पुमर्थोपाय दृष्टि से ज्ञान, योग, क्रिया एवं चर्या का ध्यान मानसिक न्यास का विधान है।

८. हाकिनी, डाकिनी, शाकिनी, लाकिनी, राकिनी और काकिनी शक्तियों का चक्रों में ध्यान और न्यास होता है।

DR.RUPNATHJI(DR.RUPAK NATH)

९. इन सभी के मध्य केन्द्रस्थ हृदय में आसीन परमेश्वर का न्यास अनिवार्यतः आवश्यक है।[१]

न्यासपञ्चक का द्वितीय न्यास— मातृकान्यास ही न्यासपञ्चक का द्वितीय न्यास है। 'तन्त्रालोक' के पञ्चदश आह्निक के श्लोकसंख्या ११६ से १२० तक मातृकान्यास का विवेचन किया गया है। इस सन्दर्भ में यह नियम द्रष्टव्य है—

मातृकां मालिनीं वाथ द्वितयं वा क्रमाक्रमात्।
सृष्ट्यप्ययद्वयैः कुर्यादेकैकं सङ्घशो द्विशः।। (१५.११६)

इससे तत्त्वों में स्फुटता आती है।

त्रितत्त्वनयास— शिव, विद्या (शक्ति) और आत्मा (नर) यही विश्व का नर शक्ति शिवात्मक मुख्य तत्त्वविभाग है। हृदय, शिखा और पद ही तीन कक्ष्यायें हैं। 'कक्ष्या' उत्तरीय, समानता एवं कक्षगत अंग या उत्तम स्थान को भी कहते हैं। शिखा में शिव का, हृदय में शक्ति का और पद में आत्मा अर्थात् नृतत्त्व का न्यास किया जाता है। यही है— त्रितत्त्वन्यास।[२]

अघोराष्टक न्यास— अघोर, ईशान, विद्या, माया, काल, नियति, पुरुष एवं प्रकृति को 'अघोराष्टक' कहते हैं। इसमें 'व्यापी' नामक नवात्मदेव का प्रकल्पन करने से यही 'नवात्मदेव न्यास' होता है (तन्त्रालोक, खण्ड प्रथम, आह्निक-१.११.१११)

शिवसद्भाव न्यास— अघोराष्टक न्यास में भी शिर, मुख, कण्ठ, हृदय, नाभि, गुह्य, जानु और चरण— ये क्रमशः आठ अंग ही गृहीत हैं। इन्हीं अंगों में शिवसद्भाव का न्यास शिष्य को शिवमय बनाने में समर्थ होता है।

इस न्यासपञ्चक में प्रथमस्थानीय न्यास अङ्गवक्त्रन्यास होता है।[३]

जीवन्यास— 'कौलावलीनिर्णय' में 'जीवन्यास' का भी विधान प्रस्तुत किया गया है, जिसके अनुसार साधक देवता के जीव को निम्न मन्त्र से अपनी देह में स्थापित करता है। वह इसका स्थापन पुष्प या अनामा उँगली या मन से करता है। मन्त्र है— 'आं सोऽहं अमुष्याः प्राणाः इह प्राणाः अमुष्याः जीव इह स्थितः अमुष्याः सर्वेन्द्रियाणि अमुष्याः वाङ्मनश्चक्षुश्रोत्रघ्राणप्राणपदानि इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा।' अथवा 'आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं हंसः सोऽहं अमुकदेवतायाः प्राणाः इह प्राणाः अमुकदेवतायाः जीव इह स्थितः। अमुकदेवतायाः सर्वेन्द्रियाणि इह स्थितानि। अमुकदेवतायाः वाङ्मनोचक्षु-श्रोत्रघ्राणपदानि इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा।'

न्यास की चरितार्थता को जो देवमयता, देवसायुज्य, देवता के साथ तादात्म्य-प्राप्ति

---

१. अभिनवगुप्तपादाचार्य : 'तन्त्रालोक' आह्निक-१५

२. तन्त्रालोक

३ तन्त्रालोक

DR.RUPNATHJI(DR.RUPAK NATH)

के रूप में निरूपित किया गया, वह उसका चरम आदर्श है और ठीक भी है क्योंकि—

उत्तमो ब्रह्मसद्भावो ध्यानभावस्तु मध्यमः।
स्तुतिर्जपोऽधमो भावो बाह्यपूजाऽधमाधमः।।

ऋषिन्यास— ऋषिन्यास के छः अंग हैं— ऋषि, छन्द, देवता, बीज, शक्ति एवं कीलक।

'यामल' में कहा गया है कि ऋषि, छन्द, देवता, बीज, शक्ति एवं कीलक पूजा तथा जप के अपरिहार्य अंग हैं और इनके विना की गई पूजा निष्फल होती है—

ऋषिच्छन्दो देवतानां विन्यासेन विना यदा।
जप्यते साधकोऽप्येष तत्र तन्न फलं लभेत्।। (७.१०१)

इन पूजांगों का स्थान भी निर्दिष्ट है; यथा— 'ऋषि' मूर्धा, 'छन्द' मुख, 'देवता' हृदय, 'बीज' गुह्यदेश, 'शक्ति' पैर और 'कीलक' सर्वांग—

ऋषिन्यासं मूर्ध्नि देशे छन्दं तु मुखपङ्कजे।
देवता हृदये चैव बीजं तु गुह्यदेशके।। आदि।

न्यासक्रिया का फल— न्यास करने से धन, यश, आयुष्य एवं कलि-कल्मष-नाश— इन चारों का लाभ प्राप्त होता है; यथा—

धनं यशस्यमायुष्यं कलकल्मषनाशनम्।
यः कुर्यान्मातृकान्यासं स एव श्रीसदाशिवः।।
(शाक्तानन्दतरङ्गिणी-७.८८)

जो न्यास करता है, उसे साक्षात् 'सदाशिव' कहा गया है। विद्या-न्यास के फल के विषय में कहा गया है कि ऐसा साधक पशु होकर भी 'पशुपति' बन जाता है—

एवं न्यासकृतः साक्षात् पशुः पशुपतिः स्वयम्।

न्यास में जो वर्णस्थापना की जाती है, उससे आवेश उत्पन्न होता है—

इत्येषा मालिनी देवी शक्तिमत्क्षोभिता यतः।
कृत्यावेशात्ततः शाक्ती तनुः सा परमार्थतः।। (तन्त्रालोक)

मालिनीन्यास की मालिनी में संहारशक्ति भी निहित है— 'संहारस्य मालिनी विमर्शिका।' (तन्त्रालोक)

DR.RUPNATHJI(DR. RUPAK NATH)